

दास-प्रथा की बुनियाद पर विकसित हुआ पूँजीवाद : चौंतीसवाँ न्यूज़लेटर (2026)



मुझे पता है यह सच है, नौदलीन पियरे (हैती), 2023

प्यारे दोस्तो,

ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान की ओर से अभिवादन ।

तमाम साम्राज्य अपने बारे में जो आख्यान बुनते हैं उनमें खूब अच्छी-अच्छी बातें होती हैं। इनमें पूँजीवाद यूरोपीय मेधा के स्वाभाविक विकास के रूप में सामने आता है—तर्क, वैज्ञानिक खोज, तकनीकी नवाचार और मेहनती व्यक्तियों की मितव्ययिता के परिणाम के रूप में। इन आख्यानों में कभी भूल से अगर उपनिवेशवाद और दास प्रथा का ज़िक्र होता भी है तो इसे आधुनिकता की ओर महान यात्रा के एक दुर्भाग्यपूर्ण चरण के तौर पर दिखाया जाता है।

प्रवीर पुरकायस्थ द्वारा किया गया हालिया शोध *The Roots of Capitalism: Slavery and the Sugar Trade* (अगस्त

2026) [पूँजीवाद की जड़ें: दास प्रथा और चीनी का व्यापार] इन आख्यानो के दूसरे पहलुओं की ओर ध्यान खींचता है। इस शोध से स्टडीज़ ऑन हिस्टोरिकल मटीरियलिज़्म [ऐतिहासिक भौतिकवाद का अध्ययन] नाम की हमारी एक नई शृंखला की शुरुआत भी की जा रही है। इस शृंखला में आधुनिक दुनिया के निर्माण का अध्ययन किया जाएगा और इस प्रक्रिया के केंद्र में होगा साम्राज्यवाद और राष्ट्र मुक्ति आंदोलनों के बीच का द्विधात्मक संबंध। प्रवीर ने अपने शोध का बड़ा हिस्सा उन 225 दिनों में लिखा जब उन्हें अक्टूबर 2023 से मई 2024 के बीच दिल्ली की रोहिणी सेंट्रल जेल में बंद रखा गया था। भारत सरकार द्वारा उनकी गैर-कानूनी गिरफ्तारी स्वतंत्र पत्रकारिता और प्रगतिशील आवाज़ों को दबाने के व्यापक दमन का हिस्सा थी। चीनी व्यापार, दास प्रथा और पूँजीवाद के इतिहास पर इस शोध की शुरुआत तब हुई जब जेल में प्रवीर से लोग मिलने जाते और उस दौरान इस विषय पर लिखे अपने विचारों को कुछ कागज़ों पर लिखकर साझा करते थे। ये हालात भी इस शोध के लिए काफ़ी सटीक लगते हैं: कैद और शोषण की व्यवस्थाओं का अध्ययन, जो कैद के दौरान एक ऐसे बुद्धिजीवी ने किया जो किसी कैद को नहीं मानता हो।



इस अध्ययन के केंद्र में चीनी है—औपनिवेशिक युग की उन प्रमुख मनो-सक्रिय वस्तुओं (हमारी चेतना को प्रभावित करने वाली, नशीली वस्तु) में से एक, जिसने शराब, चॉकलेट, कॉफी, अफ्रीम, चाय और तंबाकू के साथ मिलकर औद्योगिक क्रांति को गति प्रदान की। यूरोप में मज़दूरों की टेबल पर एक आम चीज़ की तरह आने से पहले चीनी सिर्फ राजाओं और रईसों के इस्तेमाल में आने वाली महंगी वस्तु थी। इसे जनता के उपभोग की वस्तु बनाने के लिए सिर्फ इसका स्वाद ही काम नहीं आया। इसके लिए ज़मीन हथियाई गई, मूलनिवासियों के समाज तबाह किए गए और मनुष्य का जबरन वस्तुकरण/बाज़ारीकरण किया गया : अफ्रीका के लोगों को बंदी बनाया गया, उन्हें अटलांटिक सागर के पार ले जाकर बाग़ान के मालिकों को बँधुआ मज़दूर के रूप में बेचा गया। इस लिहाज़ से चीनी सही मायने में पहली वैश्विक बिकाऊ वस्तु थी और इसे ऐसा बनाने के लिए ज़रूरी थी अफ्रीका, उत्तरी, दक्षिणी अमेरिका, एशिया और यूरोप को आपस में जोड़ती हुई एक व्यापक वाणिज्यिक तथा वित्तीय प्रणाली।

उपनिवेशवादी हिंसा जिस बड़े पैमाने पर हुई, वो वाकई हैरतअंगेज है। कम-से-कम एक करोड़ अफ्रीकियों को गुलाम बनाकर अमेरिका और कैरिबियन ले जाया गया। यदि उन लोगों को भी इसमें शामिल किया जाए, जो पकड़े जाने, जबरन मार्च कराए जाने, हिरासत में रखे जाने और मिडिल पैसेज (अफ्रीका से अमेरिका तक अटलांटिक महासागर के पार की गई जबरन समुद्री यात्रा) के दौरान मारे गए, तो अटलांटिक-पार दास व्यापार के लिए पकड़े गए अफ्रीकियों की कुल संख्या संभवतः एक करोड़ चालीस लाख से दो करोड़ के बीच थी। सत्रहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी के बीच जब एशिया और यूरोप की जनसंख्या तेजी से बढ़ रही थी, तब अफ्रीका की जनसंख्या वृद्धि या तो रुकी हुई थी या कई क्षेत्रों में इसमें गिरावट आ गई थी। यह तबाही व्यापार का एक आकस्मिक नतीजा नहीं थी। यह सुनियोजित तरीके से की गई थी। ऐसा करने वालों को इस शोध में 'बंदूक-गुलाम-धन का गठजोड़' कहा गया है: यूरोपीय हथियार और बारूद के बदले में अफ्रीका से गुलाम खरीदे गए, इस खरीद-फ़रोख्त से हुए मुनाफ़े को इस व्यवस्था में निवेश किया गया।



शहरी जीवन, ऑस्मंड वॉटसन (जमैका), 1968

इस श्रम को संगठित और पूरी तरह निचोड़ने के लिए बने बाग़ान किसी पुराने, पूँजीवाद-पूर्व विश्व के अवशेष भर नहीं थे। ये तो पूँजीवादी आधुनिकता की प्रयोगशालाओं में से एक थे। चीनी के बाग़ानों में खेती और औद्योगिक प्रसंस्करण (इंडस्ट्रियल प्रॉसेसिंग) को एक स्थान पर एक ही साथ की जाने वाली श्रमिक प्रक्रिया में बदल दिया गया। गन्ने को एक तयशुदा और सख्त समय-सारिणी के अनुसार काटना, ढोना, पेरना, उबालना और फिर उसका क्रिस्टलीकरण करना पड़ता

था। गुलामों को उम्र और शारीरिक क्षमता के हिसाब से गुटों में बाँटा जाता था और उनसे कटाई के दौरान तो अटारह से बीस घंटे प्रतिदिन काम करवाया जाता था। बागानों के मैनेजर पाई-पाई का हिसाब रखते थे, उत्पादकता की गणना करते थे, गुलामों को काम के लिए ज़िंदा रखने या नए गुलाम लाने में से क्या फ़ायदेमंद है, इसका अनुमान लगाते थे और मनुष्यों को स्थिर पूँजी – यानी ऐसी मशीनों के रूप में देखते थे, जिनका पूरा श्रम निचोड़ लेने के बाद उन्हें किसी और से बदल दिया जाए। जैसा कि अमेरिकी मानवविज्ञानी (ऐन्थ्रोपॉलॉजिस्ट) सिडनी मिंट्स ने लिखा, बागान 'खेतों और फ़ैक्टरियों का एक समन्वय था'। बागानों में किए जाने वाले समय और गति के हिसाब [पता लगाना कि किसी काम को करने में किसी गुलाम को कितना समय लगता है, इसके आधार से उनसे अधिकतम श्रम करवाना] में आधुनिक औद्योगिक कार्यस्थलों की प्रबंधन प्रणाली की शुरुआती झलक दिखाई पड़ती है।

लंदन, ब्रिस्टल, ग्लासगो और लिवरपूल की चीनी मिलें ब्रिटेन की शुरुआती फ़ैक्टरियों जैसी थीं। इनके ही आधार पर माल-ढुलाई, जहाज़ निर्माण, भंडारण, बीमा, ऋण और बैंकिंग आदि क्षेत्र विकसित हुए। 1774 तक आते-आते कच्ची चीनी कुल ब्रिटिश निर्यात का पाँचवाँ हिस्सा बन चुकी थी। 1700 से 1800 के बीच ब्रिटिश चीनी निर्यात सात गुना बढ़ गया था। चीनी से अर्जित संपदा दूर-दराज़ कैरेबियाई बागानों तक सीमित नहीं रही। उसने ब्रिटेन के व्यापारिक और औद्योगिक विस्तार को वित्तीय आधार दिया। एक अनुमान के अनुसार, 1770 तक इस विस्तार में लगाई गई पूँजी का लगभग 40 प्रतिशत हिस्सा गुलामों के व्यापार से होने वाले मुनाफ़े से आया था। उपनिवेशों में निवेश करना इंग्लैंड में निवेश करने की तुलना में चार से सात गुना अधिक लाभदायक हो सकता था। दूसरे शब्दों में, उपनिवेशों ने वह शुरुआती पूँजी उपलब्ध कराई, जिसने साम्राज्य के केंद्रों में औद्योगिक क्रांति को संभव बनाया।



केले का बागान, लासार सेगल (ब्राज़ील), 1927

ब्रिटेन की औपनिवेशिक व्यापार नीति के तहत दिए गए साम्राज्यवादी विशेषाधिकारों ने यह सुनिश्चित किया कि

उपनिवेश कच्चा माल उपलब्ध कराएँ, जबकि उसका विनिर्माण साम्राज्य के केंद्र में ही हो। कच्ची चीनी अटलांटिक पार करके ब्रिटेन पहुँचती थी, जहाँ उसे परिष्कृत किया जाता था और सबसे अधिक मुनाफ़ा वहीं रखा जाता था। टैरिफ़ (सीमा शुल्क) ने ब्रिटिश रिफ़ाइनरों की रक्षा की, जबकि कैरेबिया में रिफ़ाइनिंग को हतोत्साहित किया गया, और ब्रिटिश रिफ़ाइनरों तथा कैरेबियाई बाग़ानों को भारतीय चीनी की प्रतिस्पर्धा से बचाया। उपनिवेशवाद ने केवल उपनिवेशों से धन नहीं निकाला; उसने पूरी अर्थव्यवस्थाओं को इस तरह पुनर्गठित किया कि उपनिवेशों का उत्पादन तंत्र, औपनिवेशिक शासन के औपचारिक रूप से समाप्त होने के बाद भी, औपनिवेशिक शक्ति की प्रणाली के अधीन बनी रहें। इसे ही घाना के पहले राष्ट्रपति क्वामे नक्रूमा ने 'नव-उपनिवेशवाद' कहा था।

रोहिणी सेंट्रल जेल में बैठे प्रबीर ने पूँजी के प्रवाह का नक्शा किसी साधारण अटलांटिक त्रिकोण के रूप में नहीं, बल्कि लूट की एक ऐसी वैश्विक व्यवस्था के रूप में खींचा, जो भारत, अफ़्रीका, अमेरिका और यूरोप को आपस में जोड़ती थी। यूरोपीय व्यापारी भारतीय कपड़ों को पश्चिम अफ़्रीका भेजते थे और उसके बदले गुलाम हासिल करते थे। बंगाल का शोरा (साल्टपीटर) – जो बारूद बनाने के लिए आवश्यक था – उस घृणित व्यापार को हथियारबंद करने में सहायक था। 1757 में बंगाल पर ब्रिटिश विजय के बाद, भारतीय किसानों से वसूला गया भू-राजस्व इन निर्यातों की भरपाई करता था। इसलिए अटलांटिक त्रिकोण लूट की उस कहीं अधिक व्यापक संरचना का एक हिस्सा था, जो पूरी दुनिया में फैली हुई थी। जेम्स वाट के भाप इंजन पर गुलाम बनाए गए अफ़्रीकी बाग़ान-मज़दूरों और भूख से तड़पते भारतीय किसानों का खून लगा हुआ है।



जनमत-संग्रह, डेबोरा अरांगो (कोलंबिया), 1958

हम कभी नहीं जान पाएँगे कि उपनिवेशवाद के बिना किसी काल्पनिक दुनिया में पूँजीवाद का कोई दूसरा रूप अस्तित्व में

आया होता या नहीं। इतिहास काल्पनिक दुनियाओं में नहीं घटित होता। दरअसल, वास्तविक रूप में मौजूद पूँजीवाद को औपनिवेशिक हड़प और लूट से अलग करके नहीं देखा जा सकता। पूँजीवाद ने पहले केवल इंग्लैंड के ग्रामीण इलाकों में आकार लिया और फिर शांतिपूर्वक पूरी दुनिया में फैल गया—इतिहास की यह तस्वीर सही नहीं है। पूँजीवाद के इतिहास को एक साथ इंग्लैंड के ग्रामीण इलाकों, कैरेबियाई बाग़ानों, पोतोसी की चाँदी की खदानों, अफ्रीका के उन ठिकानों, जहाँ गुलाम बनाए गए लोगों को जमा रखा जाता था, भारत के राजस्व कार्यालयों, गुलाम बनाए गए लोगों को ले जाने वाले जहाज़ों के निचले हिस्सों और यूरोप की रिफाइनरियों में देखना होगा।

यह इतिहास हमें उस चीज़ को भी एक पूर्ण प्रसंग के रूप में नहीं देखने देता जिसे कार्ल मार्क्स ने 'मूल संचय' (*ursprüngliche Akkumulation*) कहा था। इसके तरीके आज भी मौजूद हैं: भूमि पर कब्ज़ा, अर्थव्यवस्थाओं का एकल-फलस उत्पादन के अधीन होना, ऋण-सत्ता, असमान विनिमय, दक्षिणी श्रम का अवमूल्यन, और धन का उत्तरी-नियंत्रित वित्तीय प्रणालियों में पहुँचना। रूप बदल गए हैं, लेकिन अधिग्रहण जारी है।



स्ट्रीट वर्क्स, चे लवलेस (त्रिनिदाद), 2016–2022

अगर शोषण के इन इतिहासों को गंभीरता से लिया जाए तो उपनिवेश रह चुके देशों की ओर से मुआवज़े की जो माँग

उठाई जा रही है उसे महज़ एक नैतिक अपील या पुरानी सोच पर टिकी माँग कहकर नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। इस मुआवज़े को एक भौतिक और राजनीतिक आवश्यकता के रूप में समझा जाना चाहिए : सिर्फ़ पुराने गुनाहों की याद के तौर पर नहीं बल्कि संचय के ऐसे मौजूदा ढाँचे के रूप में जो औपनिवेशिक अधिग्रहण के ज़रिए तैयार हुआ है और आज भी वैश्विक असमानता को बरकरार रखता है।

क्वेसी प्रैट जूनियर अपनी हालिया किताब *Reparations: History, Struggle, Politics, and Law* [क्षतिपूर्ति: इतिहास, संघर्ष, राजनीति और क़ानून] में यही तर्क देते हैं। Inkani Books द्वारा इस किताब का एक नया दक्षिण अफ्रीकी संस्करण आने वाला है। इस संस्करण का प्राक्कथन घाना के राष्ट्रपति जॉन ड्रामानी महामा ने लिखा है और उपसंहार प्रोफ़ेसर बेरेन शेफर्ड ने। इस मुआवज़े के कई रूप हो सकते हैं जैसे ऋण माफ़ी, लूटे गए संसाधनों की वापसी, तकनीकी ज्ञान मुहैया करवाना और उन सार्वजनिक क्षमताओं का पुनर्निर्माण करना जो उपनिवेशवाद और ऋण के बोझ के कारण बर्बाद हो गईं। यह क्षतिपूर्ति लूट के उस लंबे इतिहास का परिमार्जन होगा जिसने आधुनिक पूँजीवाद को स्थापित किया।



कैरियाकू में बिग ड्रम डांस, कैन्यूट कैलिस्ट (ग्रेनेडा), 1988

यह सिर्फ खोज अभियानों का इतिहास नहीं था। बाग़ानों की प्रणाली को शुरू से ही चुनौती मिली है। गुलाम बनाए गए लोग भाग जाया करते थे, उत्पादन में अड़चन पैदा करते थे, अपनी प्रतिबंधित सांस्कृतिक परंपराओं को जारी रखते थे, उन्होंने भागकर अपने स्वतंत्र समुदाय स्थापित किए, विद्रोह किए और अंततः स्थाई लगने वाली दास-प्रथा को खत्म कर दिया। हैती की क्रांति जो 1804 में आखिरकार स्वतंत्रता लेकर लाई, आज भी इस सच की महानतम घोषणा है कि दमन की सबसे अत्याधुनिक मशीनरी को भी उत्पीड़ित लोग पराजित कर सकते हैं।

1935 में हैती के मार्क्सवादी कवि जैक्स रूमै (1907–1944) ने अपने देश को लगातार दबाने और उसका दम घोटने की कोशिशों से क्षुब्ध होकर 'गिनी' कविता लिखी। रूमै के मित्र लैंगस्टन ह्यूज ने इस कविता का अंग्रेज़ी में अनुवाद किया था। यह कविता हैती की अफ्रीकी जड़ों और सम्मान के लिए उसके निरंतर संघर्ष का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण करती है:

यह गिनी का लंबा रास्ता है
मृत्यु तुम्हें ले जाएगी इस राह पर
यहाँ डालियाँ हैं, पेड़ हैं, जंगल है।
अनंत रात के लंबे बालों में हवा की सरसराहट सुनो।

यह गिनी का लंबा रास्ता है
जहाँ तुम्हारे पूर्वज तुम्हारा इंतज़ार कर रहे हैं धैर्यपूर्वक।
रास्ते में वे बातें करते हैं।
वे प्रतीक्षा करते हैं।
यह वह घड़ी है जब धाराएँ झनझनाती हैं
जैसे हड्डियों के मोती।

यह गिनी का लंबा रास्ता है।
तुम्हारा कोई स्वागत नहीं होगा
अंधेरे लोगों की अंधेरी भूमि में:

धुएँ से भरे आकाश के नीचे, पक्षियों की चीखों से छनकर,
नदी की आँख के चारों ओर
पेड़ों की पलकें क्षीण होती हुई रोशनी पर खुलती हैं।
वहीं, पानी के किनारे, एक शांत गाँव तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है,
और तुम्हारे पुरखों की झोपड़ी, और वह कठोर पुश्तैनी शिला
जहाँ आखिरकार तुम चिरनिद्रा में सो जाओगे।

स्नेह सहित,

विजय